जमाअते-इस्लामी हिन्द क्या चाहती है?

डॉ॰ फ़ज़्लुर्रहमान फ़रीदी

अनुवाद
गुलज़ार सहराई

'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'
(अल्लाह दयावान, कृपाशील के नाम से।)

दो शब्द

यह पुस्तिका 'जमाअते-इस्लामी हिन्द क्या चाहती है?' डॉ॰ फ़ज़्लुर्रहमान फ़रीदी का एक भाषण है जो उन्होंने जमाअते-इस्लामी हिन्द की ओर से आयोजित एक बहुत बड़ी जनसभा में दिया था। इस सभा में मुस्लिम भी थे और ग़ैर-मुस्लिम भी। इसमें उन्होंने बड़े विस्तार के साथ जमाअते-इस्लामी हिन्द के सन्देश को प्रस्तुत किया है और बताया है कि जिस प्रकार जमाअते-इस्लामी हिन्द एक सिद्धान्तवादी जमाअत है, उसी प्रकार उसका सन्देश भी सैद्धान्तिक है। इसका सम्बोधन किसी एक राष्ट्र या वर्ग के लोगों से नहीं, बल्कि समस्त मानव-जाति से है।

जमाअते-इस्लामी हिन्द तमाम इनसानों को इस बात की ओर बुलाती है कि अल्लाह (परमेश्वर) ही उनका पैदा करने वाला और पालनहार-प्रभु है, उसने इनसानों की आसानी और सुविधा के लिए हर प्रकार के साधन जुटाए हैं और सोचने तथा ग़ौर करने के लिए बुद्धि व परख प्रदान की है, ताकि इनसान पशुओं से भिन्न तथा विवेकपूर्ण जीवन बिता सके।

डॉ॰ फ़ज़्लुर्रहमान फ़रीदी के भाषणों और लेखों पर आधारित दस पुस्तकें अब तक मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स से (उर्दू में) प्रकाशित हो चुकी हैं। अल्लाह का शुक्र है कि सब लोकप्रिय हुई हैं।

हमें आशा है कि डॉ॰ फ़ज़्लुर्रहमान फ़रीदी की अन्य पुस्तकों की तरह यह पुस्तक भी पसन्द की जाएगी और जमाअते-इस्लामी हिन्द और उसके लक्ष्य को जानने और समझने में बहुत ही सहायक सिद्ध होगी।

—प्रकाशक

जमाअते-इस्लामी हिन्द क्या चाहती है?

जमाअते-इस्लामी का सन्देश एक सैद्धान्तिक सन्देश है। इसका सम्बोधन प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक वर्ग के लोगों से है। इसका सन्देश है :

"अपने स्रष्टा (पैदा करनेवाले) और पालनहार को इस प्रकार पहचानो जैसा कि उसका हक़ है। वह सारे ही इनसानों का पैदा करनेवाला और पालने वाला है। उसने तुम्हारे जीवन के लिए हर प्रकार की सुविधाएँ और संसाधन जुटाए हैं और तुमको बुद्धि व परख क्षमता प्रदान की है, ताकि तुम उसकी नेमतों से लाभ उठा सको। उसने तुमको अधिकार और इरादे की स्वतन्त्रता प्रदान की है और निर्णयशक्ति दी है, ताकि तुम दूसरे प्राणियों के विपरीत विवेकपूर्ण जीवन बिता सको।"

सारे संसार के स्रष्टा और स्वामी ने अपने अधिकारों को विभाजित नहीं किया है कि उसका शासन चलाने के लिए बहुत-से अधीनस्थ अधिकारियों की आवश्यकता हो। कोई जीवन देनेवाला और कोई मौत देनेवाला हो। किसी को

माल-दौलत का अधिकारी बनाया गया हो और किसी को रोज़ी-रोटी देने का ज़िम्मेदार ठहराया गया हो। किसी को पानी बरसाने का अधिकार दिया गया हो और किसी को धूप निकालने का अधिकार दिया गया हो। सारी नेमतें और संसाधन उसी ने प्रदान किए हैं। वही उनको दे भी सकता है और छीन भी सकता है। वह इनसान की तमाम अभिलाषाएँ पूरी भी कर सकता है और उनपर रोक भी लगा सकता है। इस सृष्टि में किसी अन्य को ऐसी शक्ति प्राप्त नहीं है। उसने यह संसार केवल पैदा ही नहीं किया है, बल्कि पैदा करने के बाद वह इसकी देख-भाल भी करता है। उसी के आदेश से हवाएँ चलती हैं और पानी भी बरसता है। फूल भी खिलते हैं और खेतियाँ भी लहलहाती हैं। उसी की देख-रेख में प्रकृति के नियम बहार भी लाते हैं और पतझड़ भी। उसके लिए यह सम्भव है कि वह सबकी सुने और सबका ध्यान रखे। ज़मीन के ऊपर और समुद्र की गहराइयों में छोटे-बड़े हर प्राणी की आवश्यकताएँ वही पूरी करता है और उसकी जानकारी भी रखता है।

उस मालिक और पालनहार की नेमतें सार्वजनिक हैं। उनसे हर एक लाभ उठा सकता है। चाहे वह अपने मालिक को पहचानता हो या उससे अनभिज्ञ हो। उसकी नेमतें तो उसके माननेवालों और न माननेवालों के बीच भी भेद नहीं करतीं। काले और गोरे, ज्ञानी और अज्ञानी, हर एक को ये नेमतें समान रूप से लाभ पहुँचाती हैं। माँ की गोद से लेकर जीवन के अन्तिम पड़ाव तक, उसने हर-हर क़दम पर अपनी

कृपा और दया के ख़ज़ाने खोल दिए हैं, जिससे हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सब लाभ प्राप्त करते हैं।

उसके ये उपकार सबपर हैं और हम सब उसके आभारी हैं। इस आभारी होने कि माँग है कि उसका आभार प्रकट किया जाए, उसके सामने सिर झुकाया जाए, उसका आदेश माना जाए और उससे तमन्नाएँ और उम्मीदें बाँधी जाएँ। इसलिए कि उसकी सृष्टि में उसके अतिरिक्त न किसी के पास देने के लिए कुछ है और न किसी में छीन लेने कि शक्ति पाई जाती है।

अल्लाह की नेमतों में से सर्वश्रेष्ठ नेमत यह है कि उसने हर क़ौम तथा हर युग में यह बताने की व्यवस्था की है कि उसका उपकार मानने का सही तरीक़ा क्या है और उसका शुक्र अदा करने के आदाब क्या हैं? उसने हर युग में अपने रसूल और पैग़म्बर भेजे ताकि वे इनसानों को यह बताएँ कि वे अपने पालनहार का शुक्र कैसे अदा करें? उसका गुणगान किस प्रकार किया जाए? उसको क्या पसन्द है और क्या नापसन्द? परन्तु समय बीतने के साथ-साथ इनसानों ने इस मार्गदर्शन को या तो भुला दिया या उसपर अपनी इच्छाओं तथा निजी व वर्गीय हितों के कवच चढ़ा दिए। इसलिए कि हर युग में ऐसे आत्म-भक्त पाए जाते रहे हैं जिन्होंने अपने स्वार्थों को आगे रखा और मालिक (ईश्वर) के मार्गदर्शन को उसके अधीन कर दिया। अतः एक प्रभु के बजाय अनेक प्रभु बना लिए गए और उनके मध्य सर्वशक्तिमान (ईश्वर) के अधिकार बाँट दिए गए। फ़रिश्तों,

जिन्नों और इनसानों से मनौतियाँ माँगी जाने लगीं और उनके सामने सज्दा किया जाने लगा। जगत्-स्वामी के दरबार में पहुँचने के लिए इनके चरण-स्पर्श को आवश्यक ठहराया गया। कितने ही ऐसे पुरोहित, पुजारी, पीर व मुरशिद, पोप और बिशप हो गए जिन्होंने रस्मो-रिवाज को ईश्वरीय आदेश का स्थान दे दिया। फिर इन 'ईश-कार्यकर्ताओं' का आदेश चलने लगा और इन पथ-भ्रष्टताओं में ईश्वरीय मार्गदर्शन लुप्त हो गया। सन्तों, महापुरुषों, सूफ़ियों और जोगियों के विचार और उनकी गढ़ी हुई दीनदारी (धार्मिकता) की चमक-दमक ने इनसानों की आँखों को चकाचौंध कर दिया। भोले-भाले और साधारण प्रवृत्ति के इनसान बहक गए। जगत्-स्वामी के भेजे हुए पैग़म्बरों की शिक्षाओं पर कुप्रथाओं के परदे डाले गए। किसी ने ख़ुदा के तीन भाग कर दिए और किसी ने उसको हज़ारों वर्गों में विभाजित कर दिया। परिणाम यह हुआ कि साधारण प्रवृत्ति का मनुष्य इस मन-गढ़न्त धर्म की भूल-भुलैयों में गुम होकर रह गया या इसके गोरख-धंधों से परेशान होकर धर्म ही से दामन झाड़कर अलग़ हो गया।

इस्लाम इसी शाश्वत मार्गदर्शन का नाम है जो पथ-भ्रष्टता की धुंध में से प्रकाशमय दिन की भाँति प्रकट हुआ है। उसने पिछले निर्देशों का समर्थन किया है और उनमें जो चीज़ें ग़लत तरीक़े से प्रविष्ट हो गई थीं, उनका संशोधन किया है। यह कोई नया दीन (धर्म) नहीं है, बल्कि समस्त इनसानों के पास अतीतकाल में जो दीन आए थे उनको

जीवित करता है। उनकी मूल शिक्षाओं का समर्थन करता है। उनके अन्दर मौजूद प्रदूषण को साफ़ करके उन्हें शुद्ध स्रोत में परिवर्तित करता है।

जमाअते-इस्लामी का सन्देश वास्तव में अपने प्रभु की ओर पलटने का आह्वान है। यह जमाअत उन मुसलमानों को भी सम्बोधित करती है जो इस इस्लाम की शिक्षाओं को ज़बान से तो मानते हैं, लेकिन व्यवहार में कम लाते हैं। यह सन्देश हिन्दू, सिख, ईसाई सबको एक ही बात बताता है, वह यह है कि इस्लाम उनकी खोई हुई पूँजी है। यह किसी गरोह की सम्पत्ति नहीं है। इसको जो कोई भी अपनाएगा वह वास्तव में अपने भूले हुए पाठ को याद करेगा। इस दीन (धर्म) को मानना दरअसल अपनी ही खोई हुई सच्चाई की रौशनी को बहाल करना है।

यह सन्देश ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को चिन्तन-मनन करने का आमन्त्रण देता है। यह सबसे कहता है कि वे यह न देखें कि कौन पुकार रहा है, बल्कि यह देखें कि पुकारनेवाला किसकी ओर पुकार रहा है? ख़ानदानों तथा वर्गों का प्रेम या घृणा इनसान को अन्धा कर देती है। हमें दुराग्रहों, आरक्षणों तथा मस्लहतों से, पारिवारिक और वर्गीय दुराग्रहों से ऊपर उठकर केवल धार्मिक हितों और अपेक्षाओं को सामने रखकर ही सोचना और ग़ौर करना चाहिए। जिसका जी चाहे उसको माने और अपनाए और जिस का जी चाहे रद्द कर दे। इसको अपनाना वास्तव में अपने 'मूल धर्म' को रस्मो-रिवाज के गोरख-धन्धे से बचा लेना है। मन की इच्छाओं

की बन्दगी के प्रदूषण से शुद्ध होकर अपने स्वामी और पालनहार कि ओर लौटना केवल इसी प्रकार सम्भव है। इस 'दीन' को भेजनेवाले ने इस बात की विशेष व्यवस्था कर रखी है कि यह दीन (धर्म) रहती दुनिया तक अपने मूल रूप में मौजूद रहे, ताकि इसमें न किसी प्रकार का परिवर्तन किया जा सके और न कोई झोल और उलझाव उत्पन्न हो। हर व्यक्ति के लिए इसे स्वीकार या ग्रहण करने में आसानी और सुविधा रहे।

यह 'दीन' किसी विशेष सभ्यता या संस्कृति के वर्चस्व का ध्वजावाहक नहीं है और न इसको ग्रहण करने से यह अनिवार्य होता है कि जन्मजात मुसलमानों की श्रेष्ठता स्वीकार की जाए। दीने-हक़ (सत्य-धर्म) के निकट मान-सम्मान, जगत्-स्वामी के तक़वे (परहेज़गारी) से प्राप्त होता है, नस्ली और जन्मजात मुसलमान होने से नहीं। इस 'दीन' में बड़प्पन और महानता ईश-भय से सम्बद्ध है, कुल, वंश और रंग से नहीं।

जमाअते-इस्लामी हिन्द का यह सन्देश इस बात की चेतावनी भी है कि संसार और उसकी नेमतें जगत्-स्वामी की देन हैं। इनका सदुपयोग इनसान को सफलता प्रदान करता है और अनुचित प्रयोग उसको असफलता तक पहुँचाता है। जगत्-स्वामी ने इनसान को बुद्धि एवं विवेक की क्षमता प्रदान की है और उसके मार्ग दर्शन के लिए वह अपने चुने हुए बन्दों को भेजता रहा है ताकि वह इन नेमतों का सदुपयोग कर सके। इस सांसारिक जीवन में वह स्वतन्त्र

है कि वह जिस प्रकार चाहे इन नेमतों का इस्तेमाल करे। परन्तु जीवन समाप्त होने के पश्चात् उससे इस बात का हिसाब लिया जाएगा कि उसने जीवन-सामग्री का कहाँ और किस प्रकार इस्तेमाल किया। इस पूछ-गच्छ के समय को इस्लाम ने 'आख़िरत' (परलोक) कहा है। यह 'दीन' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से पूछ-गछ का दीन है। Accountability का दीन है। जब यह हिसाब-किताब होगा तो उसमें पारदर्शिता (Transparency) ऐसी होगी कि इनसान के हाथ-पैर स्वयं गवाही दे उठेंगे कि यह पूछ-गछ सही, ठीक और न्याय पर आधारित है।

जगत्-स्वामी ने अधिकार और इरादे की स्वतन्त्रता इसी लिए प्रदान की है कि इनसान अपनी इच्छा से ईश्वरीय निर्देशों का पाबन्द बन जाए, इसलिए नहीं कि वह स्वयं ही ख़ुदा बन जाए और दूसरों पर अपना आदेश चलाए तथा संसार के संसाधनों को अपनी इच्छा से अपने लाभ के लिए प्रयोग करे। जो लोग यह कहते हैं कि ईश्वरीय निर्देशों की पाबन्दी मानवता का अपमान है, वे वास्तव में मानव को एक छुटे हुए बैल के स्तर पर लाना चाहते हैं कि वह संसार की विशालता में जहाँ चाहे मुँह मारे, अपने पेट और वासना की भूख जिस प्रकार चाहे मिटाए ताकि इसके परिणाम-स्वरूप बलवान लोग निर्बलों को अपने अत्याचारों की ज़ंजीर में जकड़ लें और सृष्टि में मौजूद संसाधनों की लूट-खसोट का बाज़ार गर्म हो। जिसका हाथ लम्बा हो वह इन मूल्यवान

संसाधनों को अपने अधिकार में कर ले। इसके विपरीत इनसान का बड़प्पन और उसका सम्मान इस बात में है कि वह सृष्टि की मौलिक और आदिकालिक वास्तविकताओं को स्वीकार कर ले तथा स्वयं को स्रष्टा नहीं, बल्कि 'सृष्टि' और स्वामी नहीं, बल्कि 'सेवक' के दर्जे पर रखे।

जमाअते—इस्लामी के सन्देश का यह संक्षिप्त विवरण है। इसमें न कोई झ़ोल है, न कोई दार्शनिक जटिलता और न यह वंशीय या गरोही (Sectarian) सन्देश है। यह सन्देश समस्त देशवासियों, बल्कि समस्त मानवजाति को सम्बोधित करता है। इस सन्देश को यदि वर्चस्व प्राप्त होता है तो वह सबकी संयुक्त विरासत (Common Heritage) होगी। इस जमाअत की पुकार सार्वजनिक भलाई की पुकार है। जो लोग यह कहते हैं कि इससे किसी एक विशेष वर्ग को लाभ पहुँचेगा, वे भूल जाते हैं कि यह जमाअत तमाम इनसानों को ईश्वर की सृष्टि समझती है। इसके निकट स्त्री और पुरुष, काले और गोरे, निर्बल और सबल सब बराबर हैं। इसका सन्देश समस्त इनसानों को ख़ुदा का परिवार ठहराता है और उनके साथ भलाई को बन्दगी (भक्ति) की शान बताता है। यह पीड़ितों का पक्षधर और निर्धनों का सहारा है। इस सन्देश की रौशनी में सवाल यह पैदा होता है कि जमाअते-इस्लामी इस देश के समाज में किस प्रकार का परिवर्तन लाना चाहती है?

जमाअते-इस्लामी भलाई-बुराई के मापदण्ड को बदलना चाहती है

आज की दुनिया में हर वह चीज़ अच्छी समझी जाती है जिससे लोगों के भौतिक जीवन को और अधिक सुविधाएँ मिल सकें और समाज को शक्ति प्राप्त हो जाए ताकि कोई उसका हाथ न मरोड़ सके। अतः भौतिक संसाधनों और माल-दौलत में बढ़ोत्तरी की हर कोशिश को 'भलाई' ठहरा दिया गया है और हर वह चीज़ बुरी समझी जाने लगी है जो इन उद्देश्यों की प्राप्ति में रुकावट हो। अतः पूरी दुनिया की तरह इस समाज में भी आर्थिक उन्नति सर्वश्रेष्ठ 'भलाई' बन गई है। उसके साथ शारीरिक आनन्द और ख़ुशहाली के लिए दौड़ लगाना अच्छा समझा जाने लगा है। एक ओर पूँजी, मशीन, ऊँचे-ऊँचे भवन और यातायात के साधन में बढ़ोत्तरी को जीवन का उद्देश्य बना दिया गया है, दूसरी ओर यौन-स्वच्छन्दता और कामुकता का भूत सवार हो गया है।

जमाअते-इस्लामी हिन्द के निकट केवल नैतिकता और मानव- प्रेम ही 'भलाई' है। आर्थिक उन्नति केवल वही पसन्द करने योग्य है जो साधारण मानवीय नैतिकता तथा पवित्र व्यक्तिगत जीवन-चरित्र से न केवल टकराती न हो

बल्कि उसके अधीन हो; उसको ताक़त पहुँचाए तथा एक ऐसे समाज को जन्म दे जिसमें ईमानदारी और अमानतदारी की उन्नति हो। जहाँ धन और शक्ति दोनों को महान व सर्वश्रेष्ठ ईश्वर की ओर से अमानत समझा जाए और उसका उपयोग इस प्रकार किया जाए कि समस्त मानवता इससे लाभान्वित हो। वह ऐसे समाज का निर्माण करना चाहती है जहाँ धन और शक्ति से प्रेम की जगह इनसानों से प्रेम का चलन हो। जहाँ शारीरिक सुख और आनन्द की प्राप्ति नैतिकता और सीमाओं की पाबन्द हो और इसके विपरीत 'बुराई' हर उस वस्तु का नाम हो जो बेईमानी, घृणा, शत्रुता और कामुकता पर समाप्त होती हो। धन और भौतिक लाभ के लिए अमर्यादित प्रयास, जो मानवीय सम्बन्धों का हनन करता हो, उसे समाज में 'बुराई' समझा जाता हो।

जमाअते-इस्लामी हिन्द न्याय और दयालुता पर आधारित समाज बनाना चाहती है। एक ऐसा समाज जिसमें हर इनसान को उसके वैध अधिकार मिलते हों। जहाँ पर जाति-पाँति, रंग व नस्ल तथा अक़ीदे (आस्था) और मसलक (धर्म-पंथ) के आधार पर सांसारिक समस्याओं के विभाजन में भेद-भाव न किया जाता हो। जहाँ सारे इनसान बराबर समझे जाते हों। किसी को किसी पर प्राथमिकता न दी जाती हो। इसलिए कि सारे इनसान ईश्वर की 'सृष्टि' हैं, उसके बन्दे हैं और उसकी दी हुई नेमतें सार्वजनिक हैं। अतः किसी को यह अधिकार नहीं पहुँचता कि वह इन नेमतों से लाभान्वित होने से किसी वर्ग को वंचित कर दे। बल और

शक्ति का एक मात्र स्रोत केवल ईश्वर की सत्ता है। जो शक्तियाँ भी इनसान को मिली हैं, वे उसके अधीन हैं और अस्थायी हैं। जबकि उसकी शक्ति और सत्ता स्थायी और अनादिकालिक है। इसलिए किसी को यह अधिकार नहीं पहुँचता कि वह अपनी शक्ति और सत्ता के नशे में इनसानों में से किसी को इस अधिकार से वंचित कर दे या किसी को अपने से तुच्छ समझे। या लिंग के आधार पर अधिकारों में अन्याय करे कि नारी अबला है, इसलिए उसे तुच्छ समझा जाए तथा उसे अधिकारों से वंचित कर दिया जाए, और चूँकि पुरुष बलवान है, इसलिए उसे उच्चता प्राप्त होनी चाहिए।

इस जगत् के स्वामी ने अपने चुने हुए बन्दों को अपने मार्गदर्शन का आशय यही बताया है कि वे मानव-जीवन के हर पहलू में न्याय व इनसाफ़ स्थापित करें। अत्याचार व अन्याय सर्वोच्च अल्लाह को सख़्त नापसन्द है। इसलिए वह यही चाहता है कि समाज से अत्याचार व अन्याय का ख़ात्मा हो जाए। वर्तमान भारतीय समाज में हर ओर अत्याचार व अन्याय का बोलबाला है। जमाअते-इस्लामी इसके विरुद्ध निरन्तर आवाज़ उठाती रही है। अत्याचार, अत्याचार है, चाहे वह मुसलमान के साथ हो या हिन्दू के या सिख, ईसाई या किसी अन्य के साथ। उत्पीड़ित चाहे किसी भी जाति, नस्ल या स्तर का क्यों न हो, उसकी फ़रियादों की पहुँच सीधे ईश्वर तक है। निष्ठुरता और निर्दयता का शिकार चाहे पुरुष हो या स्त्री, सब न्याय पाने के समान रूप से अधिकारी हैं।

जमाअते-इस्लामी हिन्द न्याय की ध्वजावाहक है। इसकी अवाज़ कमज़ोर सही परन्तु वह सदैव उठती रही है और भविष्य में भी ईश्वर ने चाहा तो उठती रहेगी। जताअते-इस्लामी न्याय व इनसाफ़ के साथ दयालुता व कृपाशीलता तथा सहानुभूति व शुभचिन्तन को भी विकसित करना चाहती है। वह एक ऐसा समाज निर्मित करने का आमन्त्रण देती है जहाँ केवल सत्य व न्याय ही क्रियान्वित न हो, बल्कि वहाँ पिछड़ों को अगलों के बराबर लाने, वृद्धों और निर्बलों का हाथ थामने, अनाथों और विधवाओं से प्रेम और स्नेह करने, बेसहारों को सहारा देने और निर्धनों के साथ सद्व्यवहार करने का प्रयत्न हो। जहाँ ऐसे धनवान बसते हों जो अपने धन को वंचितों तथा भूखों पर दिल खोल कर ख़र्च करते हों और जहाँ ऐसे बलवान बसते हों जो बेबस तथा कमज़ोर लोगों की सेवा को अपने लिए गौरव की बात समझते हों, जहाँ वंचित तथा निर्धन व्यक्तियों को उनके अधिकार से अधिक देने का चलन हो। यह इसलिए है कि जगत्-स्वामी केवल न्यायी ही नहीं, बल्कि सर्वथा दयालु भी है। न्याय की पकड़ सख़्त होती है। परन्तु क्षमा व माफ़ी तथा सहानुभूति और स्नेह से सामाजिक जीवन में ख़ुशगवारी पैदा होती है। अल्लाह ने इनसानों को केवल न्याय का ही उपदेश नहीं दिया, बल्कि उपकार की शिक्षा भी दी है जो समाज में प्रेम का दीप जलाता है। जिस प्रकार न्याय इनसानों के मध्य भेद-भाव नहीं करता, उसी प्रकार दयालुता भी सबपर आच्छादित रहती है। दयालु प्रभु इनसानों को

अपने शत्रुओं के साथ भी न्याय करने की शिक्षा देता है। इस प्रकार वह अपनी दयालु प्रवृत्ति के सम्बन्ध में कहता है कि उसकी दयालुता हर चीज़ पर छाई हुई है।

जमाअते-इस्लामी एक ऐसे समाज का आह्वान करती है जिसकी नींव ईश-भय, ईश्वरीय-मार्गदर्शन तथा परलोक-भय पर रखी गई है। यह शिक्षा सांसारिक जीवन को अस्थाई निवास का समय घोषित करती है तथा आख़िरत (परलोक) को शाश्वत ठिकाना। यह शिक्षा इनसान की कार्य-प्रणाली पर दयावान ईश्वर को निरीक्षक घोषित करती है, हर कोशिश की पूछ-गछ को ज़रुरी ठहराती है और अधिकार-हनन पर दण्ड को अनिवार्य बताती है।

जमाअते-इस्लामी हिन्द ऐसे समाज का गठन करना चाहती है, जहाँ लोग समाज के प्रति अपने दायित्व से परिचित हों। यह ऐसे सदस्य बनाना चाहती है जो अपने जैसे दूसरे इनसानों के प्रति ज़िम्मेदारी निभाते हों। संसार की नेमतों और साधनों को दायित्वपूर्ण ढंग से उपयोग में लाते हों। वे वर्तमान पीढ़ी के अधिकारों का भी ध्यान रखते हों और भावी पीढ़ी के अधिकारों का भी। इस दुनिया को लूट-खसोट का रण-क्षेत्र न समझते हों, बल्कि उसके नियमित तथा सदुपयोग को अपनी ज़िम्मेदारी समझते हों। यह जमाअत ऐसे सदस्य तैयार करना चाहती है जो अपने नफ़्स (मन) को बे-नकेल के ऊँट की तरह न छोड़ते हों बल्कि यह समझकर जीवन व्यतीत करते हों कि इस सांसारिक जीवन तथा इसके उपभोगों के लिए मानव सर्वज्ञानी व सर्वज्ञाता

पालनहार (ईश्वर) के समक्ष उत्तरदायी (Accountable) है, इसलिए कि यह उत्तरदायी होने का एहसास ही इनसान को ज़िम्मेदार बनाता है।

ईश्वर के प्रति उदासीन समाज में पूछ-गछ केवल क़ानून के समक्ष होती है, जिसकी पहुँच सीमित होती है तथा जिसका ज्ञान अधूरा। इसलिए इनसान उससे बहुत कुछ छिपा भी सकता है और उसके सामने 'पावनता' का चोला भी पहन सकता है। किन्तु आख़िरत (परलोक) की पूछ-गछ उस ईश्वर के सामने होगी जो खुले और छिपे दोनों से परिचित है तथा बाह्य व अन्तर (खुले और छिपे) का ज्ञाता है। उसकी पकड़ के सामने सारे बहाने कच्चे धागे की तरह टूट जाते हैं।

जमाअते-इस्लामी हिन्द एक ऐसे समाज के गठन और निर्माण की आह्वाहक है जहाँ सोचने-समझने की स्वतन्त्रता से कोई व्यक्ति या समुदाय वंचित न हो और जहाँ किसी अक़ीदे (आस्था) या मसलक (धर्म-पंथ) को ग्रहण करने पर कोई पाबन्दी न हो। इस स्वतन्त्रता को व्यावहारिक रूप से उसी समय लागू करना सम्भव है, जबकि हर दृष्टिकोण या मसलक (धर्म-पंथ) का सम्मान किया जाता हो, बशर्ते कि वह दृष्टिकोण या मसलक मानव जीवन के मूलभूत मानदण्डों को आघात न पहुँचाता हो।

मानव-स्वतन्त्रता का यही सम्मान है, जिसकी रक्षा तथा जिसके फलने-फूलने के लिए इस्लाम आधुनिक परिभाषा में

लोकतन्त्र का ध्वजावाहक है और जिसपर उसका इतिहास गवाह है। चुनाँचे जमाअते-इस्लामी ऐसी राजनीतिक स्थिति की ध्वजावाहक है, जिसमें जनसाधारण सत्ता में सम्मिलित हों तथा अपने निर्णय स्वयं लेते हों। वह ज़ोर-ज़बरदस्ती, फासीवाद और तानाशाही की विरोधी रही है तथा भविष्य में भी रहेगी। इस्लाम ने अपने आरम्भिक काल में भी, जबकि दूसरे देशों और राज्यों को इस शासन-प्रणाली का ज्ञान भी न था, ख़िलाफ़त का तरीक़ा प्रचलित किया, (शासन को चलाने के लिए) चुनाव का ढंग अपनाया तथा शासकों में इस बात की चेतना जागृत की कि वे जनता के प्रतिनिधि व उत्तराधिकारी होने के कारण जनता के सामने भी उत्तरदायी हैं और ईश्वर के सामने भी। जमाअते-इस्लामी इस देश में भी इसी प्रकार का समाज और इसी ढंग के राज्य की स्थापना का आहवान करती है और चाहती है कि लोगों के चिन्तन-मनन व सोचने-समझने की आज़ादी पर प्रतिबन्ध न लगाया जाए।

इस स्वतन्त्रता की प्राप्ति इस बात पर निर्भर है कि हर व्यक्ति की जान व माल तथा मर्यादा आदरणीय हो। मानव-अस्तित्व जगत्-स्वामी की दी हुई नेमतों में सबसे क़ीमती नेमत है। इसलिए उसका सम्मान अनिवार्य है। हत्या तथा लूट-मार इस नेमत के लिए घातक विष हैं। किसी को यह अधिकार नहीं पहुँचता कि वह किसी की जीवन-पूँजी छीन ले, सिवाय इस स्थिति के कि जिसमें किसी व्यक्ति का

अस्तित्व इस नेमत के लिए हानिकारक हो तथा न्याय और सत्यता को असाधारण क्षति पहुँचती हो।

उपरोक्त तमाम बातों से महत्वपूर्ण इस जमाअत का सन्देश समस्त देशवासियों के लिए है कि वे ऐसे समाज की स्थापना करें जिसमें उनके रचयिता और स्वामी की बात सबसे ऊँची हो। उसके निर्देशों के अनुसार जीवन का निर्माण और गठन किया जाए। आदेश यदि चले तो केवल जगत्-प्रभु का। रास्ते यदि अपनाए जाएँ तो उसी के निर्देशों के प्रकाश में तथा कार्यक्रम यदि बनाए जाएँ तो उसकी प्रदान की हुई शिक्षाओं की रौशनी में। ईश्वर के उपकारों का सही रूप में शुक्र भी इसी प्रकार अदा किया जाना चाहिए। जगत्-प्रभु की कृपाओं का शुक्र केवल मौखिक पूजा-पाठ से नहीं अदा किया जा सकता, बल्कि कर्म द्वारा इसकी अभिव्यक्ति अनिवार्य है।

ईश्वरीय मार्गदर्शन का इनकार करनेवाले लोग अपने जीवन-पथ का निर्माण करने कि लिए बुद्धि तथा अनुभव को अपना पथ-प्रदर्शक बनाते हैं और उससे हर कठिनाई का समाधान और हर बीमारी का इलाज माँगते हैं। परन्तु मानव की बुद्धि और उसके अनुभव न न्याय व दयालुता को सुनिश्चित कर सकते हैं और न मानवीय-सम्बन्धों की स्वस्थ तथा निस्वार्थ आधारों पर स्थापना कर सकते हैं। वे मनुष्य के प्रयास के उद्देश्यों को निश्चित भी नहीं कर सकते। बुद्धि असफल इसलिए है कि उसपर इच्छाओं तथा घृणा व प्रेम की भावनाएँ छाई रहती हैं, वह सन्तुलित कार्यशैली की

ओर पथ-प्रदर्शन करने से विवश रहती है। जैसा कि पूँजीवादी समाज में होता है, जहाँ पूँजीपतियों की भलाई दृष्टिगत् रहती है तथा श्रमिकों का हित उसके अधीन घोषित करने के लिए जटिल विचारों तथा दार्शनिक व ज़ोर-ज़बरदस्ती के तर्कों से काम लिया जाता है। या जैसा कि साम्यवादी समाज में रहा, जहाँ श्रमिकों को ऐसा वर्चस्व सौंपा गया कि पूँजीपतियों तथा धनवानों के मूल अधिकार भी नष्ट हो गए। अकेली मानव-बुद्धि एक अति से दूसरी अति तक ले जाने का नाम है। इसके घातक प्रभावों का अवलोकन धार्मिक दृष्टिकोणों में भी किया जा सकता है। एक ओर तो वह चिन्तन-शैली है जिसमें व्यक्ति को धर्म के चौधरियों का मुहताज बना दिया जाता है तो दूसरी ओर वह दृष्टिकोण है जिसमें इनसान को केवल अपनी अन्तरात्मा के मार्गदर्शन में जीवन व्यतीत करने का पाठ पढ़ाया जाता है।

मानव-बुद्धि की आत्मनिर्भरता का एक और अनुभव संसार ने व्यक्ति और समाज के आपसी सम्बन्धों के क्षेत्र में कर लिया है तथा आगे भी कर रहा है। कुछ लोगों ने समाज और उसके कथित हितों की रक्षा के लिए व्यक्ति को केवल एक पुर्ज़ा घोषित कर दिया है और कुछ ने इसके बिल्कुल विपरीत व्यक्ति के हितों की रक्षा को मानवीय प्रयासों का आदि व अन्त घोषित कर दिया। तात्पर्य यह कि इन दोनों 'अतियों' के बीच मानव थपेड़े खाता रहा है।

जमाअते-इस्लामी हिन्द ऐसे ही समाज का आह्वान करती है जहाँ बुद्धि और विवेक को जगत्-प्रभु के मार्गदर्शन

के अधीन कर दिया जाए, जहाँ ईश्वर से उद्दण्डता तथा उदासीनता के स्थान पर उसकी आज्ञापालन का बोलबाला हो।

आज संसार में बुद्धिजीवियों की एक बड़ी संख्या जगत्-प्रभु के निर्देशों के पालन को मानवता का अपमान घोषित करने पर अड़ी है। वह ऐसे जीवन को प्रतिबन्धों का जीवन कहती है। हालाँकि वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत है। इनसान ख़ुदा से आज़ाद होकर अपनी या दूसरों की इच्छाओं का दास बन जाता है। वह ईश्वरीय मार्गदर्शन का इनकार करके इनसानों की आज्ञापालन का फन्दा अपनी गर्दन में डाल लेता है। कभी पूँजीपतियों का दास बन जाता है, कभी बलवानों का। कभी चतुर राजनीतिज्ञों का तो कभी चालबाज़ धार्मिक नेताओं का। ग़ुलामी से उसको कभी छुटकारा नहीं मिला है, और आज भी छुटकारा नहीं है। अतीत में वह धर्म के ठेकेदारों और स्वयं निर्मित सीमाओं और प्रतिबन्धों की जकड़बन्दियों का शिकार रहा है और आज धन, भौतिक स्वार्थों तथा कामेच्छाओं का ग़ुलाम है। इस प्रकार उसने हज़ारों ख़ुदा और लाखों जकड़बन्दियों का आविष्कार कर लिया है। इसके विपरीत जगत्-स्वमी का अज्ञापालन उसको समस्त आज्ञापालनों से मुक्ति दिलाता है, सच्ची स्वतन्त्रता दिलाता है और वास्तविक आत्म-सम्मान से लाभान्वित कराता है। यदि निष्पक्षता से इस्लाम-धर्म का अध्ययन किया जाए तो मालूम होगा कि वह आधारभूत मूल्यों तथा

सैद्धान्तिक आदेश देने के बाद सामाजिक जीवन को संकीर्ण रास्तों में क़ैद करने के बजाय ऐसी विशालता प्रदान करता है जो असीमित समुद्र है। इसमें प्रत्येक अभिरुचि की सन्तुष्टि का सामान है।

